संस्कृत साहित्य सौरभ

Acc. No 9976 (8.1.77)

बुद्ध-चरित

R.B.A.N.M's High School (Main) LIBRARY

Acc: 2976
18.1.77

संस्कृत-साहित्य-सौरभ

२०

Gen- Book

अश्वघोष-कृत

बुद्ध-चरित

●

R. B. A. N. M'S. HIGH SCHOOL LIBRARY
Accn No
Sec. No
BANGALORE

श्री वासुदेवशरण अग्रवाल

द्वारा

कथा-सार

●

R.B.A.N.M'S H.S (M) LIBRARY
B'lore-4.
Access: No ; 4338
U.D.C No: 93-914-3(VIS)N.58
Date; 21-3-83

विष्णु प्रभाकर

द्वारा

संपादित

●

१९५८

सत्साहित्य प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली

0152,6(v)
N58

●

तीसरी बार : १९५८
मूल्य
सैंतीस नये पैसे

B. N. M. S. HIGHER SEC SCHOOL LIBRARY :: BANGALORE.
Acc No ....
Sec No ....

●

मुद्रक
हिंदी प्रिंटिंग प्रेस
दिल्ली

S. A. N. M'S. HIGH SCHOOL LIBRARY
Accn No ....
Sec. No ....
BANGALORE

संस्कृत-साहित्य-सौरभ

हमारा संस्कृत-साहित्य अत्यंत समृद्ध है। भारतीय जीवन का शायद ही कोई ऐसा अंग हो जिसके संबंध में मूल्यवान सामग्री का अनंत भंडार संस्कृत-साहित्य में उपलब्ध न हो। लेकिन खेद की बात है कि संस्कृत से अपरिचित होने के कारण हिंदी के अधिकांश पाठक उससे अनभिज्ञ हैं। उनमें जिज्ञासा है कि वे उस साहित्य से परिचय प्राप्त करें; परंतु उसका रस वे हिंदी के द्वारा लेना चाहते हैं।

पाठकों की इसी जिज्ञासा को देखकर बहुत समय पहले हमने विचार किया था कि संस्कृत के प्रमुख कवियों, नाटककारों आदि की विशिष्ट रचनाओं को छोटी-छोटी कथाओं के रूप में हिंदी में प्रस्तुत करें। फलतः अबतक कई पुस्तकें निकाल दी गई हैं।

इस पुस्तक-माला से हिंदी के सामान्य पाठक भी लाभ उठा सकें, इसलिए पुस्तकों की भाषा बहुत सरल बनाने का प्रयत्न किया गया है। टाइप भी मोटा लगाया गया है।

इन पुस्तकों का संपादन हिंदी के सुलेखक श्री विष्णु प्रभाकर ने बड़े परिश्रम से किया है।

आशा है, हिंदी के पाठकों को इन पुस्तकों से संस्कृत-साहित्य की महान् रचनाओं की कुछ-न-कुछ झांकी अवश्य मिल जायगी।

तीसरा संस्करण

इस माला की सभी पुस्तकें बहुत ही लोकप्रिय हो रही हैं, और हमें हर्ष है कि कुछ पुस्तकों का तीसरा संस्करण तक प्रकाशित हो रहा है। आशा है कि भारतीय संस्कृति के प्रेमी पाठक इन पुस्तकों को और भी चाव से अपनायेंगे।

—मंत्री

भूमिका

महाकवि अश्वघोष प्रथम शती ईस्वी में हुए। वह सम्राट् कनिष्क के समकालीन कहे जाते हैं। उनकी माता का नाम सुवर्णाक्षी था। वह साकेत के रहनेवाले थे। उनका जन्म ब्राह्मण-कुल में हुआ और उन्होंने अनेक दार्शनिक और काव्य-ग्रंथों का गंभीर अध्ययन किया। अनंतर वह बौद्ध धर्म की ओर आकृष्ट हुए और संघ में दीक्षित होकर भिक्षु बन गए।

उन्होंने 'बुद्ध-चरित' और 'सौंदरनंद'—दो महाकाव्यों की रचना की। सौंदरनंद में बुद्ध के भाई नंद और उसकी पत्नी सुंदरी की कथा है। बुद्ध-चरित के केवल चौदह सर्ग प्राप्त हुए हैं। मूल ग्रंथ में अट्ठाईस सर्ग थे, जिसमें बुद्ध के जीवन की कथा, जन्म से लेकर परिनिर्वाण तक, दी गई थी। इस काव्य का चीनी भाषा में अनुवाद धर्मरक्ष नाम के एक भारतीय विद्वान् (४१४-३१ ई०) ने किया था, जिसमें अट्ठाईस सर्ग हैं। दूसरा अनुवाद तिब्बती भाषा में हुआ। उसमें भी अट्ठाईस सर्ग हैं। स्वर्गीय डा० जांस्टन (आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में संस्कृत के प्राध्यापक) ने अप्राप्य सर्गों का तिब्बती और चीनी से अंग्रेजी में अनुवाद किया। इसीके आधार पर बुद्धत्व-प्राप्ति के बाद से परिनिर्वाण तक की कथा यहां लिखी गई है।

इन दोनों काव्यों के अतिरिक्त अश्वघोष ने शारद्वती प्रकरण नामक एक नाटक भी लिखा था, जिसमें मौद्गल्यायन और शरिपुत्र के बौद्ध धर्म में दीक्षित होने की कथा है। इस नाटक की खंडित प्रति मध्य एशिया से मिली थी। उसीके साथ दो नाटक और भी थे। इन दोनों के कर्ता भी शायद अश्वघोष थे। हाल ही में डा० सिलवां लेवी को अश्वघोष-कृत एक नया बड़ा काव्य प्राप्त हुआ है, जिसका वह संपादक कर रहे हैं। अश्वघोष ने कुछ महायान-दर्शन के ग्रंथ भी लिखे थे, किंतु उनकी प्रसिद्धि महाकवि के ही रूप में अधिक है। 'बुद्ध-चरित' संस्कृत का पहला महाकाव्य है जो उपलब्ध होता है। इसकी कविता अत्यंत ललित और भाव बहुत सरस हैं। उपमाएं बड़ी ही सुंदर तथा प्रकृति-वर्णन अत्यंत सजीव हैं। रसों में इन्हें शांत रस सबसे प्रिय है। रूखे दार्शनिक सिद्धांतों को भी इन्होंने सरस और मधुर बना दिया है।

—संपादक

बुद्ध-चरित

: १ :

इक्ष्वाकु-वंश में शुद्धोदन नाम का राजा हुआ है। वह शाक्यों का अधिपति था। उसकी राजधानी कपिलवस्तु थी। उसका आचरण पवित्र था। उसके महामाया नाम की सुंदरी रानी थी। एक बार रानी ने स्वप्न देखा कि एक श्वेत हाथी आकाश से उतरकर उसके शरीर में प्रवेश कर रहा है। इसके उपरांत रानी गर्भवती हुई। उसके मन में यह इच्छा उत्पन्न हुई कि वह वन में जाकर वृक्षों और पुष्पों के साथ क्रीड़ा करे। रानी ने अपने मन की यह बात राजा से कही। राजा ने प्रसन्न होकर उसे स्वीकार किया। रानी महामाया अनेक सखियों के साथ नगर से बाहर लुंबिनी नामक वन में गई। वहां वह उद्यान-क्रीड़ा से मन बहलाने लगी। वहींपर उसी समय उसने एक पुत्र को जन्म दिया। जन्म लेते ही बालक सात पग चला और उसने भविष्यवाणी की, "जगत् के हित के वास्ते बोधि प्राप्त करने के लिए मैं जन्मा हूं। संसार में यह मेरा अंतिम जन्म है।" उसके जन्म से सबको आनंद

हुआ। ब्राह्मणों ने उसके लक्षण देखकर भविष्यवाणी की कि यह बालक बड़ा होकर या तो चक्रवर्ती सम्राट् होगा या महाबुद्ध बनेगा। असित नाम का वृद्ध ब्रह्म-ज्ञानी भी आया और आंखों में आंसू भरकर बोला, "जब यह बालक बड़ा होगा तबतक मैं संसार से चला जाऊंगा। किंतु इसके ज्ञान से जो धर्म की नदी बहेगी, सारा संसार उसका जल पीकर अपनी प्यास शांत करेगा। यह धर्मराज बुद्ध बनकर जगत के बंधनों का मोक्ष करेगा।" यह सुनकर राजा को कुछ प्रसन्नता और कुछ चिंता हुई।

उन्होंने उस पुत्र का नाम सर्वार्थ-सिद्धि रखा, किंतु मायादेवी नवजात शिशु को छोड़कर स्वर्ग चली गईं। तब बच्चे की मौसी ने उसका पालन किया। वह कुमार शुक्ल-पक्ष के चंद्रमा के समान दिन-दिन बढ़ने लगा। उचित समय पर पिता ने विधिवत् उसका उप-नयन-संस्कार किया। कुमार ने कुछ ही दिनों में अपने कुल के अनुकूल विद्याएं सीख लीं। तब पिता ने यशोधरा नाम की सुंदर और सुशील कन्या से उसका विवाह कर दिया। सब प्रकार के सुखों के बीच में रहते हुए कुमार गौतम और यशोधरा के कुछ समय बाद राहुल नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ।

इस घटना से राजा शुद्धोदन बहुत प्रसन्न हुए, किंतु कोई अज्ञात शक्ति गौतम के मन को बाहर खींचने लगी। घर के भीतर बंधे हुए हाथी के समान उसने बाहर जाने का विचार किया। उसका विचार सुनकर राजा ने विहार-यात्रा की आज्ञा दे दी। कुमार सोने के रथ पर बैठकर चला। उसे देखने के लिए भवनों पर स्त्रियों के समूह और मार्ग में पुरुषों के ठट्ठ एकत्र होगए। मार्ग में चलते हुए कुमार ने पहली बार एक बूढ़े व्यक्ति को देखा। उसकी आंखें उस ओर गड़ गईं। उसने सारथी से पूछा, "यह कैसा पुरुष है ?" सारथी ने उत्तर दिया कि रूप और बल का नाश करनेवाले बुढ़ापे ने इसे ऐसा कर दिया है। यह सुनकर कुमार बड़ा बेचैन हुआ। उसने सारथी से पूछा, "क्या मेरे साथ भी ऐसा ही होगा ?" सारथी ने कहा, "हां काल के वश में पड़कर आप भी रूप का नाश करनेवाली जरा से आक्रांत होंगे।" यह सुनकर कुमार ने लंबी सांस ली और वह चिंता में डूबा हुआ महल में लौटा। जरा क्या है, यह सोचने में उसकी शांति चली गई।

दूसरी बार वह फिर उसी तरह से बाहर गया। तब उसने एक रोगी को देखा। उसने सारथी

से पूछा, "यह दोष केवल इसीको हुआ है या सभी लोगों को रोग का भय होता है ?" सारथी ने कहा, "हे कुमार, रोगों से सभीको भय है ।" उसने सारथी को रथ लौटाने की आज्ञा दी और ध्यान में डूबे हुए महल में प्रवेश किया । राजा ने उसे सुख देने के लिए सब उपाय किये और अंत में मन बहलाने के लिए बाहर जाने की अनुमति दे दी । इस बार उसने देखा कि एक व्यक्ति को चार पुरुष कंधे पर लिये जा रहे हैं और कुछ व्यक्ति रोते हुए उसके पीछे चल रहे हैं । पूछने पर सारथी ने कहा, "यह प्राणी, जो कभी बुद्धि और इंद्रियों से युक्त था, अब काष्ठ के समान निर्जीव होगया है और इसके अपने प्रिय-जन ही इसे छोड़ रहे हैं ।" यह सुनकर कुमार के मन को गहरी चोट लगी । उसने कहा, "क्या इसीपर यह बीती है या सबका अंत ऐसा ही है ?" सारथी ने कहा, "सबका अंतिम कर्म यही है । छोटा हो या बड़ा, संसार में सबका नाश निश्चित है ।" यह सुनकर राजकुमार दुःख और शोक में डूब गया । उसने कहा, "हे सूत, रथ लौटाओ, विहार के लिए जाने का न यह समय है, न स्थान ।" राजपुत्र के ऐसा कहने पर भी सारथी उसका जी बहलाने के लिए रथ को कमल-वन की

ग्रौर ले गया। वहां ग्रनेक सुंदर स्त्रियों ने उसका स्वागत किया। पुष्पों ग्रौर वृक्षों से भरे हुए उस वन में ग्रनेक प्रकार से वे कुमार का मन ग्रपनी ग्रोर खींचने का प्रयत्न करने लगीं, परंतु उसका मन हर्षित न हुग्रा, क्योंकि 'एक दिन मरना है' इस प्रकार का भाव उसके मन में घर कर गया था। उसने सोचा—ग्राह ! क्या ये स्त्रियां नहीं जानतीं कि यौवन चंचल है ? एक दिन जरा इस रूप का नाश कर देगी। कुमार को विरक्त देखकर उसके मित्र मंत्रीपुत्र उदायी ने उसे प्रेमपूर्वक समझाया, फिर भी उसका मन विषयों में नहीं फंसा। उसने कहा, "हे मित्र, यदि जरा, व्याधि ग्रौर मृत्यु न होती तो मेरा भी मन इन विषयों में ग्रवश्य लगता। ग्रात्मवान पुरुषों को विषयों में ग्रासक्ति नहीं होती।" इस प्रकार कहकर कुमार वहां से महल लौट ग्राये। इस घटना को सुनकर राजा शुद्धोदन को नींद न ग्राई।

: २ :

राजपुत्र का मन शांति की खोज में था। उसने फिर से ग्राज्ञा लेकर वन-भूमि देखने के लिए बाहर प्रस्थान किया। मार्ग में श्रम से व्याकुल किसानों ग्रौर हल में जुते बैलों को देखकर उस ग्रार्य को बड़ी करुणा

हुई। उसने दुखी होकर कहा, "यह जगत् निश्चय ही दीन है।" वह एक स्थान पर बैठकर ध्यान करने लगा। उसकी बुद्धि निर्मल होने लगी। उसी समय उसने सामने से आते हुए एक संन्यासी को देखा। राज-पुत्र के पूछने पर उसने कहा, "जरा और मृत्यु से डर-कर मोक्ष पाने के लिए मैंने संन्यास लिया है।" यह कह-कर वह अदृश्य होगया। कुमार के मन में भी घर त्यागकर संन्यासी होने का विचार बार-बार घूमने लगा। नगर में लौटकर वह पिता के पास गया और हाथ जोड़कर उसने परिव्राजक बनने की आज्ञा चाही, किंतु राजा किसी प्रकार भी इसके लिए तैयार नहीं हुआ। यही नहीं, उसने कुमार की देख-रेख का पक्का प्रबंध कर दिया। कुमार अपने निवास-स्थान को लौट गया। दिन बीतने पर उसने अंतःपुर के ऊपरी भाग में प्रवेश किया। वहां शयन-कक्ष में उसने अनेक स्त्रियों को सोते हुए देखा। उनके वस्त्रों को अस्त-व्यस्त देखकर कुमार के मन में वैराग्य की भावना और प्रबल हो उठी। उसने उसी रात को संसार छोड़ने का निश्चय किया। वह नीचे उतरकर भवन के पहले आंगन में आया, जहां उसने सारथी को घोड़ा तैयार करने की आज्ञा दी। वह राजपुत्र स्नेही

पिता को, बालक पुत्र को और लक्ष्मी के समान पत्नी को छोड़कर नगर से बाहर निकल गया।

सवेरे जब सूर्योदय हुआ, वह भार्गव के आश्रम में पहुंच गया था। उसने घोड़े की पीठ से उतर बड़े स्नेह से उसका स्पर्श किया और सारथी से कहा, "हे छंदक, तुमने मेरे प्रति जो भक्ति दिखाई है, उससे मैं अत्यंत प्रसन्न हूं। अब तुम घोड़े को लेकर लौट जाओ।" इतना कहर उसने अपने सब आभूषण खोल-कर उसे दे दिये। मुकुट में से मणि निकालकर उसे देते हुए उसने कहा, "हे छंदक, यह मणि देकर राजा से मेरा प्रणाम निवेदन करना और कहना कि मेरे-लिए शोक न करें। मैंने मोक्ष प्राप्त करने के लिए घर छोड़ा है। संसार में धन के दायाद बहुत हैं, परंतु धर्म के दायाद दुर्लभ हैं।"

यह सुनकर सारथी रोने लगा। उसने कहा, "आपके बिना नगर में जाने पर राजा मुझसे क्या कहेंगे?" कुमार ने सारथी को समझाया, "यह शोक छोड़ो, देहधारियों का वियोग निश्चय है। यदि स्नेहवश मैं स्वजनों को न भी छोड़ूं, तो मृत्यु हम दोनों को अवश्य अलग कर देगी। मेरी माता अब कहां है और उसके लिए मैं कहां हूं? इस जगत् का समागम स्वप्न

है। तुम कपिलवस्तु जाओ और वहां मेरी आशा करने-वाले स्वजनों से कहना कि या तो जन्म और मृत्यु का क्षय करके वह कुमार शीघ्र लौटेगा या उसी प्रयत्न में मृत्यु को प्राप्त हो जायगा।"

तब उस धीर ने म्यान से तलवार निकालकर अपने केशों को काट डाला और उसी समय सामने से आते हुए वनचर से गेरुए वस्त्र लेकर पहन लिये। उसके बाद रोते हुए छंदक को विदा कर उसने आश्रम में प्रवेश किया।

वहां अनेक तपस्वी नाना प्रकार की तपस्याओं में लीन थे। सिद्धार्थ ने एक तपस्वी से कहा, "मैं पहली बार आश्रम में आया हूं। आप मुझसे कहें कि किस उद्देश्य से आप इन क्रियाओं में लगे हैं?" उसने कहा, "अनेक प्रकार से तप साधनवाले लोग स्वर्ग जाते हैं।" इस आश्रम में कोई मुनि उञ्छवृति से जीवित थे, कोई वायु-भक्षण करते हुए सर्प की तरह प्राण धारण कर रहे थे। कोई शिल-बट्टे से अन्न कूटकर खाते थे, कोई केवल दांत से ही चबाकर अन्न खा लेते थे। कोई दोनों समय अग्निहोत्र करते थे। उन सब क्रियाओं को देखकर कुमार का मन उस तपोभूमि से उचट गया और उसने दूसरी जगह जाने का संकल्प

किया। वहां के लोगों ने उसे रोकना चाहा, किंतु उसकी निश्चत बुद्धि देखकर कहा, "यदि आप मोक्ष पाने की इच्छा से जाना ही चाहते हैं तो शीघ्र विंध्य-कोष्ठ नामक स्थान में जाइये, जहां अराड मुनि का आश्रम है।" कुमार ने उन्हें प्रणाम कर विदा ली।

: ३ :

इधर जब सारथी घोड़े के साथ नगर में लौटा तो लोग उसे घेरकर पूछने लगे, "हे छंदक, पुर और राष्ट्र को आनंद देनेवाले उस राजपुत्र को तुम कहां छोड़ आये ?" सारथी ने रोते हुए कहा, "मैंने राजकुमार को नहीं छोड़ा, उसने ही निर्जन वन मे मुझे छोड़कर अपना गृहस्थ वेश भी त्याग दिया है।" छंदक के लौटने का समाचार क्षणभर में सब कहीं फैल गया। स्त्री और पुरुष शोक से मूर्च्छित हो गए। रोती हुई राजा की पटरानी गौतमी शोक से मूर्च्छित होकर गिर पड़ी। गहरे शोक से आंसू बहाती हुई यशोधरा ने रुंधे हुए कंठ से कहा, "रात में सोती हुई विवश मुझे छोड़कर, हे छंदक, मेरा वह मनोरथ कहां गया ? हे छंदक, तुम तो हमारे मित्र थे, आर्य-पुत्र को कहां छोड़ आये ?" फिर उसने घोड़े की ओर घूमकर देखा, "हे कंथक, मेरे रात में सोये रहने पर तुम उस

मेरे जीवन-सर्वस्व को कहां चुरा लेगए ?" यशोधरा का यह विलाप सुनकर सारथी ने कहा, "हे देवी, आपको न कंथक पर और न मुझपर ही रोष करना चाहिए। देवों ने मुझसे यह सब कराया। राजकुमार के लिए दरवाजे स्वयं खुल गये, लोग गहरी नींद में सो गये, हमारा कुछ दोष नहीं है।" यह सुनकर दुखित गौतमी और भी दुःख से विलाप करने लगी। यशोधरा के दुःख की सीमा न रही। उसने कहा, "आह, यदि स्वामी का मुख देखना मेरे भाग्य में नहीं था तो क्या मंद-भाग्य यह राहुल भी अपने पिता की गोद के योग्य न था, जो उन्होंने ऐसे बालपुत्र को छोड़ दिया ? मेरा यह दारुण हृदय पत्थर या लोहे का है, जो फट नहीं जाता।" जब राजा ने यह समाचार सुना तो वह भी शोक से भरकर ऐसे गिर पड़े, जैसे उत्सव समाप्त होने पर इंद्र की ध्वजा। तब गुणवान मंत्री और वृद्ध पुरोहित ने राजा को समझाया, "हे नरश्रेष्ठ, शोक छोड़कर धैर्य धारण करो। कुमार के लिए तो इस प्रकार का भविष्य निश्चित ही था। असित मुनि ने पहले ही कह दिया था कि न स्वर्ग का राज्य और न चक्रवर्ती राज्य ही एक क्षण उन्हें सुख से रख सकता था, फिर भी यदि आपकी इच्छा हो तो

हम दोनों जाकर उन्हें ढूंढ़ें।" राजा ने "अच्छा" कहकर उन्हें आज्ञा दी।

मंत्री और पुरोहित दोनों कुमार को ढूंढ़ने के लिए वन को चले। वे भार्गव-आश्रम में पहुंचे। वहां अपना परिचय देकर उन्होंने कुमार के विषय में पूछा। उन्हें ज्ञात हुआ कि कुमार वहां आया था, किंतु वह अराड के आश्रम की ओर चला गया। वे दोनों शीघ्र ही उसी ओर चल पड़े। कुछ दूर पर उन्होंने वृक्ष के नीचे बैठे हुए कुमार को देखा। रथ छोड़कर वे दोनों उसके समीप गये और परस्पर उचित आदर के उपरांत पुरोहित ने राजपुत्र से कहा, "हे कुमार, राजा ने नेत्रों से जल बरसाते हुए तुम्हारे लिए कहा है कि तुम असमय में वन का आश्रय मत लो। लक्ष्मी की गोद में लोटते हुए गृहस्थों ने भी मोक्ष-धर्म प्राप्त किया है। धर्म केवल वन में ही सिद्ध नहीं होता। नगर में यतियों की सिद्धि होती है। अपना मन और यत्न ही इसमें कारण है। वन और वेश कायर के चिन्ह हैं। आपके लिए राजा के ये शब्द उनके आंसुओं से भीगे हुए हैं। वत्सल गाय के समान तुम्हारा संवर्धन करनेवाली उस देवी को और उस आर्त पत्नी को और उस बालपुत्र राहुल को तुम्हें दर्शन देकर बचाना चाहिए।" यह सुन-

कर कुमार ने विनयपूर्वक उत्तर दिया, "स्वजनों के स्निग्ध भाव को जानते हुए भी मैंने जरा और मृत्यु को जीतने के लिए उन्हें छोड़ा है। यहां स्वजनों का समागम स्वप्न के समान है और वियोग निश्चित है। विषय-सेवन के लिए अकाल होता है, मोक्ष या कल्याण का मार्ग ढूंढ़ने के लिए नहीं।" उसके बाद मंत्री ने भी कुमार को समझाया, किंतु कुमार ने यही कहा कि यदि सूर्य पृथ्वी पर गिर पड़े, यदि हिमालय अपनी स्थिरता छोड़ दे, तो भी तत्त्व को देखे बिना मैं घर नहीं लौट सकता। जलती हुई अग्नि में मैं भले ही प्रवेश कर जाऊं, किंतु मनोरथ प्राप्त किये बिना घर में प्रवेश नहीं करूंगा। उसका यह स्थिर निश्चय सुनकर मंत्री और पुरोहित रोते हुए लौट गए।

: ४ :

इसके बाद राजकुमार गंगा पार करके राजगृह में पहुंचा। नगर में उसके आने की बात चारों ओर फैल गई। कुमार ने पर्वत के एकांत स्थान पर अपना आसन जमाया। सूचना पाकर राजा बिंबसार उसके समीप उपस्थित हुए और कहा, "हे महानुभाव, कृपाकर मेरा स्नेह-वचन सुनें। आपके महान् कुल से मेरी परंपरागत प्रीति है। आपका शरीर राज्य के योग्य

है, भिक्षा के योग्य नहीं। हे सौम्य, यदि आप स्नेहवश अपने पिता का राज्य न लेना चाहें, तो शीघ्र ही मेरा आधा राज्य स्वीकार करें।" मगधराज से इस प्रकार की बात सुनकर कुमार ने विकार-रहित होकर कहा, "हे राजन्, मित्रभाव और आर्यभाव से मेरे प्रति आपका यह जो निश्चय हुआ है, उसके उत्तर में अनुनयपूर्वक मेरा यह कहना है कि जरा और मृत्यु का भय जानकर मोक्ष की इच्छा से मैं इस धर्म की शरण में आया हूं। सर्पों से और वज्रों से मैं उतना नहीं डरता, जितना विषयों से। संसार को भोगों से तृप्ति नहीं होती, जैसे समुद्र को जल-धाराओं से। विषयों में स्वाद कम है, बंधन अधिक है, ऐसा जानकर इन्हें कौन चाहेगा ? अंगारे की आग के समान जलते हुए कामों में आत्म-संयमी को आनंद नहीं मिलता। मुझे राज्य का कोई मोह नहीं है। आप यदि मेरे मित्र हैं तो यही कामना करें कि मैं अपनी प्रतिज्ञा का पालन करूं। हे राजन्, आपका कल्याण हो ! मैं आज ही मोक्षवादी मुनि अराड को देखने की इच्छा से यहां से जा रहा हूं।" इस प्रकार कुमार का दृढ़ निश्चय देखकर राजा कुछ न कह सके।

वहां से चलकर राजकुमार मुनि अराड के आश्रम में गया। मुनि ने उसका स्वागत करते हुए कहा, "हे

सौम्य, मुझे मालूम है कि तुम किस प्रकार घर से निकले हो। परमधर्म को जानने के लिए तुम उत्तम पात्र हो। ज्ञान-रूपी नाव पर चढ़कर दुःख-सागर को पार करो।"

कुमार ने विनयपूर्वक ऋषि से जरा, मृत्यु और रोग से मुक्ति का उपाय पूछा। उत्तर में अराड ने कहा कि जन्म-मरण की वेगवती धारा को छोड़कर, अक्षर पद प्राप्त करने के लिए ब्रह्मचर्य-व्रत धारण करते हुए पर-ब्रह्म की उपासना करनी चाहिए। कुमार ने उसका उपाय पूछा तो ऋषि ने शास्त्रानुसार संक्षेप में उसे मोक्षधर्म का उपदेश दिया, किंतु कुमार को उससे संतुष्टि न हुई। वह अराड से विदा लेकर उद्रक के आश्रम में गया। आत्मा के सिद्धांत को मानने के कारण उसका दर्शन भी उसे न रुचा। तब वह गया नगरी के समीप नैरंजना नदी के तीर पर पहुंचा। वहां उसने तप करते हुए पांच भिक्षुओं को देखा और स्वयं भी उपवास द्वारा कठिन तप करना आरंभ किया। उसने सोचा कि मृत्यु और जन्म का अंत करने में यही उपाय काम देगा। उसकी खाल व हड्डियां शेष रह गईं। मेद-मांस-शोणित सभी खत्म होगया। कठोर तप द्वारा शरीर का क्लेश व्यर्थ जानकर उसने फिर सोचा—इससे तो न मुझे वैराग्य मिलेगा, न ज्ञान होगा, न मुक्ति।

जो भूख और प्यास से ग्रस्त है, उसका चित्त कैसे स्वस्थ हो सकता है। जिसका मन स्वस्थ और प्रसन्न है, उससे ही समाधि सिद्ध होती है। यह सोचकर उसने आहार लेने का निश्चय किया। उसी समय गोपराज की पुत्री नंदवला खीर लेकर वहां आई और श्रद्धा से प्रणाम कर उसने उसे खीर दी। सिद्धार्थ ने खीर से अपने को तृप्त किया। यह देखकर साथ के पांचों भिक्षुओं ने उसे धर्म से गिरा समझकर उसका साथ छोड़ दिया। तब वहीं नैरंजना नदी से कुछ दूर पर वह एक पीपल के नीचे गया और वहां बुद्धत्व प्राप्ति के लिए पर्यंकासन लगाकर इस प्रकार प्रतिज्ञा की—जबतक मैं बोधि प्राप्त करने में सफल नहीं होऊंगा, इस आसन को नहीं छोड़ूंगा।

उसकी यह प्रतिज्ञा सुनकर संसार को हर्ष हुआ, किंतु सद्धर्म के शत्रु मार ने, जिसे पुष्पधन्वा कामदेव भी कहते हैं, उसपर चढ़ाई की। विभ्रम, हर्ष, दर्प, नाम के उसके तीन पुत्रों ने एवं अरति, प्रीति और तृषा नामक तीन कन्याओं ने अपने पिता की सहायता की। मार ने धनुष चढ़ाकर उस मुनि को ललकारा, "हे मृत्यु से भयभीत क्षत्रिय, उठ, स्वधर्म का आचरण कर, मोक्ष-धर्म का त्याग कर, नहीं तो तेरेलिए मेरा यह बाण

तैयार है।" जब शाक्यमुनि ने अपना आसन न छोड़ा, तब मार ने उसपर अपना बाण चला दिया। फिर भी वह मुनिराज धैर्य से विचलित न हुआ। तब मार ने शाक्यमुनि की शांति भंग करने के लिए अपनी सेना को याद किया, किंतु मार की सेना के सामने भी उस महर्षि को न क्रोध हुआ, न भय। उसने गंभीर स्वर में कहा, "हे मार, तुम व्यर्थ मेहनत न करो। हिंसा-भाव छोड़ो और शांत हो। जैसे मेरु वायु से कंपित नहीं होता, वैसे ही तुम मुझे कंपा नहीं सकते। अग्नि अपनी उष्णता छोड़ दे, पानी तरलता छोड़ दे, पृथ्वी स्थिरता छोड़ दे, किंतु अनेक जन्मों से उपार्जित मैं अपने इस निश्चय को न छोड़ूंगा। तत्त्व को प्राप्त किये बिना मैं इस आसन से किसी प्रकार न उठूंगा। हे मार, जो यह मेरा बढ़ता हुआ ज्ञान है--क्षमा जिसकी जटा है, धैर्य जिसका मूल है, चरित्र जिसके फूल हैं, स्मृति और बुद्धि शाखाएं हैं, और धर्म जिसका फल है--यह काटे जाने योग्य नहीं। इसलिए तू शोक मत कर, शांति को प्राप्त हो।"

उसकी यह प्रतिज्ञा सुनकर मार विफल होकर वहां से चला गया। मार के पराजित होकर चले जाने पर चंद्रमा हँसने लगा और आकाश ने उसके ऊपर पुष्प

R.B.A. ... S.H.S ... LIBRARY B'lore-4. Access No: U.D.C No: Date:

वृष्टि की।

मार की सेना को जीतकर शाक्यमुनि परमार्थ को जानने की इच्छा से ध्यान में लीन होगए। वह रामभर ध्यानमग्न रहे। अंत में जो जाना जा सकता है, उस तत्त्व को उचित रीति से जान लेने पर वह नर-श्रेष्ठ संसार के सामने बुद्ध होकर खड़ा हुआ। परम ज्ञान के अष्टांगिक मार्ग द्वारा उसने शांति प्राप्त की। रात्रि के चौथे पहर में जब उषा का आगमन हुआ, तब वह महर्षि सर्वज्ञता प्राप्त करके बुद्ध हो चुके थे। वह सात दिन तक उसी प्रकार निश्चल बैठे रहे। उन्होंने अनुभव किया कि मैंने मुक्ति प्राप्त कर ली है, किंतु जगत् मिथ्या विचारों और कामवासना से नष्ट हो रहा है। एक बार उन्होंने सोचा कि मोक्षधर्म अत्यंत सूक्ष्म है, इसलिए मैं अपने ही ध्यान में लगा रहूं; किंतु फिर उन्होंने सोचा कि मैंने भवसागर पार कर लिया है, इसलिए अपने ही लाभ की बात सोचकर केवल अपने हित में लगे रहना ठीक नहीं। मुझे संसार का हित करना चाहिए। संसार में या स्वर्ग में ऐसा व्यक्ति दुर्लभ है, जो जगत की मुक्ति के लिए काम करे।

इस प्रकार जगत की मुक्ति के लिए उनका

निश्चय दृढ़ हुआ। उसी समय देवों ने उन्हें भिक्षा-पात्र दिया और दो सार्थवाह श्रेष्ठियों ने उन्हें पहली भिक्षा दी। बुद्ध ने सोचा कि अराड और उद्रक, जो दोनों मेरे इस धर्म को समझने के योग्य थे, अब इस लोक में नहीं रहे। तब उन्हें अपने साथी पांच भिक्षुओं का ध्यान आया और उनसे मिलने के लिए वह काशी की ओर चले। गया से चलकर वह काशी नगरी के पास मृगदाव नामक स्थान में पहुंचे। दूर से उन्हें आते हुए देखकर कौंडिन्य, महानाम, वाष्प, अश्वजित् और भद्रजित् नामक पांच भिक्षुओं ने आपस में कहा, "वह देखो, भिक्षु गौतम आ रहा है, जिसने सुख के लिए तप का मार्ग छोड़ दिया था। हमें उसका सम्मान या अभिवादन नहीं करना चाहिए।" किंतु जैसे ही बुद्ध उनकी ओर बढ़े, वे (भिक्षु) अपने इस विचार को न रख सके। एक ने उठकर उनकी संघाटि थाम ली, और दूसरे ने हाथ जोड़कर भिक्षापत्र ले लिया। तीसरे ने बैठने के लिए आसन दिया और शेष दो ने पैर धोने के लिए जल। सबने गुरु की तरह उनका स्वागत किया और 'गौतम' को संबोधन किया। तब बुद्ध ने उनसे कहा, "भिक्षुओं, अर्हत् भगवान का पूर्व के समान नाम मत लो, वह अब बुद्ध हो चुके हैं।" उन्होंने

पूछा, 'मैं बुद्ध हो गया हूं'—आपका यह कथन किस प्रकार ठीक है ? आपने तो तप का परित्याग कर दिया था।" तब तथागत ने कहा, "जो शरीर को क्लेश देता है अथवा जो इंद्रियों से कामोपभोग करता है, दोनों ही भ्रांत हैं। दोनों को ही अमृत पद प्राप्त नहीं होता। मैंने मध्यमवर्ग प्राप्त किया है, जिससे दुःख का अंत होता है। यह संसार दुःखमय है। उस दुःख का यह कारण है। उस कारण का निरोध होता है और उस निरोध का यह मार्ग है। इस प्रकार निर्वाण-प्राप्ति के लिए मैंने धर्म के विषय में अपूर्व दृष्टि प्राप्त की है। जन्म, जरा, व्याधि और मृत्यु, संयोग और वियोग मनुष्यों के लिए दुःख के कारण हैं। उनसे बचने के लिए मैंने आर्य-सत्य-चतुष्टय को जान लिया है।"

बुद्ध के इस प्रथम धर्मोपदेश को सुनकर वे पांचों भिक्षु अत्यंत प्रसन्न हुए और बौद्धसंघ में प्रथम स्थान को प्राप्त हुए। इस प्रकार पहली बार बुद्ध ने धर्मचक्र का प्रवर्तन किया।

: ६ :

उसी समय काशी के श्रेष्ठी पुत्र यश का मन वैराग्यभावना से आकुल हो रहा था। वह बुद्ध की शरण में आया और उनके उपदेश से भिक्षु बन गया।

बुद्ध ने उन छहों भिक्षुओं को आज्ञा दी, "अब तुम इस धर्म का सबके लिए उपदेश और प्रचार करो। हे भिक्षुओ, पृथिवी में विचरण करो और लोक के कल्याण के लिए इस धर्म का प्रचार करो।" यह कहकर वह स्वयं गया की ओर चले गए। वहां काश्यप अपने आश्रम में पांचसौ शिष्यों के साथ रहते थे। बुद्ध ने उन्हें अपने धर्म में दीक्षित किया। वहां से वह राजगृह गए और वेणु वन में बिंबसार से भेंट की। काश्यप के मत-परिवर्तन की बात वहां पहले ही पहुंच चुकी थी। लोगों ने बड़े उत्साह से बुद्ध का स्वागत किया। काश्यप ने सबके सामने अपने-आपको बुद्ध का शिष्य घोषित किया। मगधराज बिंबसार ने भी उनसे उपदेश ग्रहण किया।

राजा ने बुद्ध को वेणुवन नामक उद्यान अर्पित किया। उसी समय शारद्वती-पुत्र उपतिष्य नामक एक अत्यंत प्रौढ़ सांख्यवादी भिक्षु ने बुद्ध के अश्वजित् नामक शिष्य से धर्म का प्रवचन सुनकर धर्म की दीक्षा ली और उपतिष्य के मित्र मौद्गल्यायन ने भी धर्म-ग्रहण किया। बुद्ध उन दोनों की असाधारण प्रतिभा से बड़े प्रभावित हुए और उन्होंने उन दोनों को अपना प्रधान शिष्य स्वीकार किया। वहीं राजगृह में ही

उन्होंने अर्हत् महाकश्यप को शिष्यरूप में प्राप्त किया।

उसी समय श्रावस्ती के धनी श्रेष्ठी, जिनका नाम सुदत्त था, राजगृह आये। उन्होंने वहां बुद्ध के विषय में सुना और उनसे भेंट की। जैसे ही रात के समय वह बुद्ध से मिले, बुद्ध ने उन्हें पहचान लिया और उन्हें धर्म के लिए अपनी धन-राशि सर्मपित करने का संकेत करते हुए, धर्म का उपदेश दिया। बुद्ध के उपदेश का सुदत्त पर बहुत प्रभाव पड़ा। उन्होंने बुद्ध से कहा, "मेरा स्थान श्रावस्ती में है। मेरी इच्छा है कि वहां आपके लिए एक बिहार का निर्माण करूं। कृपया उसे स्वीकार करें।" बुद्ध ने अपनी स्वीकृत प्रदान की। बुद्ध से विदा लेकर सुदत्त, जो अनाथपिण्डद नाम से प्रसिद्ध थे, उपतिष्य को साथ लेकर श्रावस्ती लौट आये। वहां उन्होंने राजकुमार जेत के उद्यान को रुपये बिछाकर खरीद लिया और उसमें बुद्ध के लिए सुंदर और विशाल बिहार का निर्माण किया।

बुद्ध राजगृह से चलकर कपिलवस्तु की ओर आये। पुरोहित और मंत्रियों ने समाचार जानकर राजा शुद्धोदन को सूचना दी। सुनते ही राजा उनके स्वागत के लिए बाहर आये और उन्होंने दूर से बुद्ध को अपने शिष्यों से घिरे हुए देखा। अपने पुत्र को भिक्षुवेश में

देखकर राजा शुद्धोदन बरबस रो पड़े। बुद्ध ने कहा, "हे राजन्, अपने कोमल चित्त के कारण आप मुझे देखकर शोक से अभिभूत होगए हैं। अब आप पुत्र-शोक छोड़कर शांत हों और कृपाकर मुझसे धर्म का उपदेश सुनें। मैं आपको वह वस्तु दूंगा, जो किसी पुत्र ने अपने पिता को नहीं दी।" तब उनसे धर्म सुनकर शुद्धोदन और उनके साथ अनेक राजपुरुष शांति को प्राप्त हुए।

बुद्ध का आगमन सुनकर स्त्रियां भी अंतःपुर से बाहर निकल आईं। वे भी उनके भिक्षु-वेश को देखकर विलाप करने लगीं। सबसे अधिक दुःख यशोधरा को हुआ। उसने कहा, "उस व्यक्ति के लिए क्या कहा जाय जो अपने पुत्र राहुल को रोते हुए देखकर भी स्वजनों से मुख मोड़ ले?" किंतु बुद्ध नगर में घूमकर भिक्षा मांगने लगे और उसी प्रकार शांत चित्त से कपिलवस्तु में कुछ दिन निवास करके श्रावस्ती चले गए। वहां श्रेष्ठी अनाथपिण्डद ने जेतवन नामक विहार उन्हें प्रदान किया। वहीं कोसल के राजा प्रसेनजित उनसे मिलने आये और अपनी नम्रता प्रदर्शित की। बुद्ध ने यह जानकर कि राजा का मन राग से भरा हुआ है, उसे धर्म का उपदेश दिया। कहा जाता है कि श्रावस्ती में

रहते हुए बुद्ध ने त्रयस्त्रिंश स्वर्ग में जाकर अपनी माता को धर्म का उपदेश दिया और वहां से लौटकर सांकाश्य नागरी में आये।

: ७ :

इस प्रकार दिन-दिन बुद्ध के धर्म का प्रचार बढ़ने लगा। उन्होंने राजगृह में, गांधार में, विदेह, अंग, सुह्म, वैशाली, गया, वाराणसी, मथुरा, वैरञ्जा, श्रावस्ती, सेतविका, कौशांबी आदि स्थानों में घूमकर कितने ही लोगों को अपने धर्म का संदेश सुनाया। उनके बढ़ते हुए यश से उनके चचेरे भाई देवदत्त के मन में ईर्ष्या उत्पन्न हुई और उसने उन्हें मारने के कई प्रयत्न किये। उसने राजगृह में बुद्ध के ऊपर एक मतवाला हाथी छोड़ दिया, किंतु बुद्ध ने अपने धैर्य और शांति से उसे भी वश में कर लिया।

कुछ समय बाद वह राजगृह से पाटलिपुत्र गये। वहां मगध के राजा अजातशत्रु का मंत्री वर्षकार उनसे मिलने आया। पाटलिपुत्र से बुद्ध ने वैशाली की ओर विहार किया और वहां वह आम्रपाली के उद्यान में ठहरे। वहां आम्रपाली उनके दर्शन के लिए आई और हाथ जोड़कर बैठ गई। बुद्ध ने उसे भोगों पर विजय प्राप्त करने का उपदेश दिया, विशेषकर स्त्रियों के

लिए धर्म की शरण में आने का महत्व समझाया। आम्र-पाली को अपने इस जीवन पर बहुत पश्चात्ताप हुआ। उसने बुद्ध के सामने दंडवत् प्रणाम किया और उन्हें भिक्षा के लिए अपने यहां आमंत्रित किया। बुद्ध ने स्वीकृति देकर उसे कृतार्थ किया।

जब लिच्छवि राजकुमारों को यह बात मालूम हुई तो वे भी बुद्ध से मिलने आये। बुद्ध ने उनके सामने वृजि या लिच्छवि जनपद और उनके अनुशासनमय जीवन की प्रशंसा की और पाप से मुक्त होने का उपदेश दिया। उन्होंने हाथ जोड़कर बुद्ध को अपने यहां निमंत्रित किया, किंतु बुद्ध ने उन्हें सूचना दी कि वह पहले ही आम्रपाली का निमंत्रण स्वीकार कर चुके हैं। अगले दिन आम्रपाली के यहां उन्होंने भिक्षा ग्रहण की।

वैशाली में रहते हुए बुद्ध ने अपना अंत समीप आया हुआ जान लिया। उन्होंने आनंद से यह बात कही। सुनकर आनंद बहुत व्याकुल हुए। उनकी यह दशा देखकर बुद्ध ने कहा, "हे आनंद, संसार के धर्म को पहचानो, शोक मत करो, ये सब अनित्य हैं। मैं चाहे रहूं या निर्वाण चला जाऊं, केवल तथागत का धर्मकार्य सत्य है, यह स्थूल शरीर तुम्हारे लिए किस काम का ? धर्म का यह प्रदीप प्रजा का प्रदीप है, जो सदा प्रज्वलित रहेगा।

तब बुद्ध ने अंतिम बार वैशाली के लिच्छवियों को उपदेश देकर वहां से विदा ली और चलते हुए कहा, "हे वैशालि, अब अपने अवशिष्ट आयुष्काल में मैं तुम्हें फिर न देखूंगा, क्योंकि मैं निर्वाण प्राप्त करने जा रहा हूं। वहां से भोगनगर होते हुए वह मल्लों की पावा नगरी में पहुंचे और वहां चुंद के घर में उन्होंने अपना अंतिम आहार ग्रहण किया। वहां से इरावती नदी पार करके वह कुशीनगर में आये। अपना अंतिम समय जानकर उन्होंने आनंद से कहा, "आनंद, दो साल-वृक्षों के बीच में मेरेलिए स्थान ठीक करो, आज रात्रि के पिछले पहर में तथागत निर्वाण प्राप्त करेंगे।"

आनंद ने आंखों में आंसू भरकर बुद्ध के लिए शय्या तैयार की। बुद्ध उसपर लेट गये। उन्होंने आनंद से कहा, "हे आनंद, मल्लों को सूचित कर दो कि मेरे निर्वाण का समय आगया है, नहीं तो उन्हें बहुत शोक होगा।" समाचार सुनते ही मल्ल लोग दौड़े हुए आये और शोक करने लगे। तथागत ने उन्हें शांत रहने का उपदेश देते हुए कहा, "यह आनंद का समय है, विलाप करना उचित नहीं। वह अतिदुर्लभ निर्वाण, जिसके लिए मैंने जन्म-जन्मांतर प्रयत्न किया है, अब समीप आगया है और दुःखों का भंडार यह शरीर मुझसे

छूट रहा है। तब क्या मेरेलिए तुम्हारा रोना उचित है।" इसपर एक वृद्ध ने कहा, "तथागत उस व्यक्ति के समान हैं, जो जलते हुए घर को छोड़कर जा रहे हैं, किंतु हमारा शोक इस कारण है कि हम अब तथागत को फिर से न देख पावेंगे।" तथागत ने कहा, "मेरे न रहने पर प्रातिमोक्ष को ही तुम अपना आचार्य, प्रदीप और रतन समझना। संसार में चर और अचर सब नाशवान हैं, इसलिए प्रमाद-रहित होकर कल्याण का साधन करो।"

यह कहते हुए उन्होंने अपने नेत्र बंद कर लिये।

'मंडल' द्वारा प्रकाशित प्राप्य साहित्य

गांधीजी-लिखित

प्रार्थना-प्रवचन (भाग १)	३·००
,, ,, (भाग २)	२·५०
गीता-माता	४·००
पंद्रह अगस्त के बाद	१·५०, २·००
धर्मनीति	१·५०, २·००
दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह	३·५०
मेरे समकालीन	५·००
आत्मकथा	२·५०, ४·००
आत्म-संयम	३·००
गीता-बोध	०·५०
ग्राम-सेवा	०·३७
मंगल-प्रभात	०·३७
सर्वोदय	०·३७
नीति-धर्म	०·३७
आश्रमवासियों से	०·३७
हमारी मांग	१·००
सत्यवीर की कथा	०·२५
संक्षिप्त आत्मकथा	१·५०
हिंद-स्वराज्य	०·७५
अनीति की राह पर	१·००
बापू की सीख	०·५०
गांधी-शिक्षा (तीन भाग)	०·६३
आज का विचार (दो भाग)	०·७५
ब्रह्मचर्य (दो भाग)	१·७५
गांधीजी ने कहा था (६ भाग)	२·२५

विनोबाजी-लिखित

विनोबा के विचार: (२ भाग)	३·००
शांति-यात्रा	१·५०
जीवन और शिक्षण	२·००
स्थितप्रज्ञ-दर्शन	१·००
ईशावास्यवृत्ति	०·७५
ईशावास्योपनिषद्	०·१२
उपनिषदों का अध्ययन	१·००
सर्वोदय-विचार	१·१२
स्वराज्य-शास्त्र	०·७५
भू-दान-यज्ञ	०·२५
गांधीजी को श्रद्धांजलि	०·३७
राजघाट की संनिधि में	०·६२
विचार-पोथी	१·००
सर्वोदय का घोषणा-पत्र	०·२५

नेहरूजी-लिखित

मेरी कहानी	८·००
हिंदुस्तान की समस्याएं	२·५०
राष्ट्रपिता	२·००
राजनीति से दूर	२·००
हमारी समस्याएं (२ भाग)	१.००
हिंदुस्तान की कहानी	५·००
विश्व इतिहास की झलक (सं.)	५·००

अन्य लेखकों की

आत्मकथा (राजेंद्रबाबू)	८·००
गांधीजी की देन ,,	१·५०
गांधी-मार्ग ,,	०·१२
महाभारत-कथा (राजाजी)	५·००
कुब्जा सुंदरी ,,	२·००
शिशु-पालन ,,	०·५०
मैं भूल नहीं सकता	२·५०
कारावास-कहानी (सु. नै.)	१०·००
गांधी की कहानी (लु. फि.)	४·००
भारत-विभाजन की कहानी	४·००
गांधी-श्रद्धांजलि-ग्रंथ	३·००
इंग्लैंड में गांधीजी	२·००
बा, बापू और भाई	०·५०
गांधी-विचार-दोहन	१·५०
अहिंसा की शक्ति (ग्रेग)	१·५०
बुद्ध-वाणी (वियोगी हरि)	१·००
संत सुधासार (संक्षिप्त)	५·००

'S H.S (M) LIBRARY

बुद्धवाणी	(वियोगी हरि)	१·००
संत सुधासार	,, (सं.)	११·००
प्रार्थना	,,	०·५०
अयोध्याकाण्ड	,,	१·००
भागवत-धर्म	(हरि. उपा.)	६·५०
श्रेयार्थी जमनालालजी	,,	६·५०
स्वतंत्रता की ओर	,,	४·००
बापू के आश्रम में	,,	१·००
मानवता के झरने	(माव.)	१·५०
बापू	(घनश्यामदास बिड़ला)	२·००
रूप और स्वरूप	,,	०·६२
डायरी के पन्ने	,,	१·००
ध्रुवोपाख्यान	,,	०·२५
स्त्री और पुरुष	(टाल्स्टाय)	१·००
मेरी मुक्ति की कहानी	,,	१·५०
प्रेम में भगवान	,,	२·००
जीवन-साधना	,,	१·२५
कलवार की करतूत	,,	०·२५
हमारे जमाने की गुलामी	,,	०·७५
बुराई कैसे मिटे ?	,,	१·००
बालकों का विवेक	,,	०·७५
हम करें क्या ?	,,	३·५०
धर्म और सदाचार	,,	१·२५
अंधेरे में उजाला	,,	१·५०
कल्पवृक्ष	(वा० अग्रवाल)	२·००
हिमालय की गोद में		२·००
साहित्य और जीवन		२·००
कब्ज	(म० प्र० पोद्दार)	१·००
राजनीति-प्रवेशिका		१·००
जीवन-संदेश	(ख. जिब्रान)	१·२५
अशोक के फूल		३·००
जीवन-प्रभात		५·००
तुकाराम गाथासार		१·५०
उत्तराखंड के पथ पर		२·००

कांग्रेस का इतिहास (संक्षिप्त)	५·००
पंचदशी (सं० यशपाल जैन)	१·५०
सप्तदशी	२·००
रीढ़ की हड्डी	१·५०
अमिट रेखाएं	३·००
एक आदर्श महिला	१·००
राष्ट्रीय गीत	०·२५
आत्म-रहस्य	३·००
थेरी-गाथाएं	१·५०
बुद्ध और बौद्ध साधक	१·५०
हमारे गांव की कहानी	१·५०
साग-भाजी की खेती	३·००
पशुओं का इलाज	०·५०
रामतीर्थ-संदेश (३ भाग)	१·१२
रोटी का सवाल (क्रोपा.)	३.००
नवयुवकों से दो बातें ,,	०·३७
पुरुषार्थ (डा० भगवानदास)	६·००
काश्मीर पर हमला	२·००
शिष्टाचार	० ५०
भारतीय संस्कृति	३·५०
आधुनिक भारत	५·००
फलों की खेती	२·५०
मैं तंदुरुस्त हूं या बीमार	०·७५
नवजागरण का इतिहास	३·००
गांधीजी की छत्रछाया में	२·५०
भागवत-कथा	३·५०
समुद्र के जीव-जंतु	१·५०
जय अमरनाथ	१·५०
प्रगति के पथ पर (७ भाग)	१·७५
संस्कृत-साहित्य-सौरभ (३३ पुस्तकें) प्रति पुस्तक	०·३७
समाज-विकास-माला (८९ पुस्तकें) प्रति पुस्तक	०·३७

'संस्कृत साहित्य सौरभ' की पुस्तकें

१. कादम्बरी
२. उत्तररामचरित
३. वेणी-संहार
४. शकुन्तला
५. मृच्छकटिक
६. मुद्राराक्षस
७. नलोदय
८. रघुवंश
९. नागानन्द
१०. मालविकाग्निमित्र
११. स्वप्नवासवदत्ता
१२. हर्ष-चरित
१३. किरातार्जुनीय
१४. दशकुमार चरित : भाग १
१५. दशकुमार चरित : भाग २
१६. मेघदूत
१७. विक्रमोर्वशी
१८. मालतीमाधव
१९. शिशुपाल वध
२०. बुद्ध-चरित
२१. कुमारसंभव
२२. महावीर चरित
२३. रत्नावली
२४. पंचरात्र
२५. प्रियदर्शिका
२६. वासवदत्ता
२७. रावणबध
२८. सौन्दरनन्द

R.B.A.N.M's High School (Main) LIBRARY

मूल्य प्रत्येक का छः आना

छः आना